इकाई 2 भारतीय विमर्श-I

संरचना

नंदिता मंडल

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 पृष्ठभूमि

2.4 असंगठित क्षेत्र में महिला कामगार

2.4.1 संस्थागत असंगठित क्षेत्र

2.4.2 गैर-संस्थागत असंगठित क्षेत्र

2.5 असंगठित क्षेत्र में महिला कामगारों की समस्याएं

2.6 संगठित क्षेत्र में महिला कामगार

2.7 पंचवर्षीय योजनाएं (एफवाईपी): महिला कामगार

2.8 सारांश

2.9 इकाई के अंत में कुछ प्रश्न

2.10 संदर्भ

2.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

2.1 प्रस्तावना

महिलाओं की आर्थिक गतिविधियों पर अंतर्राष्ट्रीय विमर्श के बारे में पढ़ने के बाद, इस इकाई में हम भारतीय विमर्श और उसके रूबरू लाभप्रद रोजगार में महिलाओं की भागीदारी और राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में उनके योगदान के बारे में केन्द्रित रहेंगे। यह इकाई आपके सामने उस घटना की परिस्थितियों और उन कारणों को उजागर करेगी, जिसने भारत सरकार को महिला श्रमिकों के हितों की ओर ध्यान केन्द्रित करने को अभिप्रेरित किया और यह भी कि भारतीय अर्थव्यवस्था में उनका योगदान अभी भी किस तरह से अदृश्य है।

इसके पश्चात इकाई में संस्थागत और गैर-संस्थागत दोनों प्रकार के अनौपचारिक क्षेत्रों में महिला कामगारों की स्थिति के बारे में चर्चा की जाएगी। और फिर संगठित क्षेत्र में जैसे कि सेवा विनिर्माण और प्रशासनिक सेवाओं में महिलाओं पर चर्चा की गई है। पंचवर्षीय योजनाओं में महिला कामगारों की स्थिति का विहंगावलोकन करते हुए यह इकाई समाप्त होगी।

आइए, अब इस इकाई के उद्देश्यों पर एक नज़र डालते हैं।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई को पूर्णतया पढ़ लेने के बाद, आप इस योग्य होंगे कि :

- भारतीय अर्थव्यवस्था में 1970 से 1985 तक की अवधि में महिलाओं के योगदान की व्याख्या कर सकें; और

- भारतीय अर्थव्यवस्था में महिलाओं के योगदान के महत्व और उसकी गहराई की समालोचकीय पड़ताल कर सकें।

2.3 पृष्ठभूमि

"आप किसी राष्ट्र की हालत वहां रहने वाली महिलाओं की स्थिति देखकर बता सकते हैं।"

-जवाहर लाल नेहरू

भारत के प्रथम प्रधानमंत्री की उपरोक्त अभिव्यक्ति भारतीय अर्थव्यवस्था में महिलाओं के योगदान के संदर्भ में आज भी प्रासंगिक है।

1971 में, अंतर्राष्ट्रीय महिला वर्ष की पूर्व संध्या पर, भारत सरकार ने फूलरेनु गुहा की अध्यक्षता में भारत में महिलाओं की स्थिति पर एक समिति की नियुक्ति की थी। इस समिति को भारतीय महिलाओं के अधिकारों और उनकी स्थिति का पड़ताल करने और उत्तर औपनिवेशिक भारत में राष्ट्र निर्माण हेतु महिलाओं को उचित भूमिका निभाने के लिए कुछ उपायों को सुझाने का अधिदेश दिया गया था। जब 1974 में इस समिति की रिपोर्ट प्रकाशित हुई तो उसे भारत में महिलाओं की स्थिति पर 'ऐतिहासिक मानदण्ड' की तरह स्वीकार किया गया। रिपोर्ट में 1911 से 1971 तक काम में महिलाओं की गिरती सहभागिता को रेखांकित किया गया था। परिवार में महिलाओं के कार्यों और निर्वाह अर्थव्यवस्था को भारत की जनगणना द्वारा दर्ज नहीं किया गया था।

यहाँ इस इकाई के लिए, काम को बहुत ही परंपरागत तरीके से आर्थिक रूप से उत्पादक गतिविधि में भागीदारी के रूप में पारिभाषित किया गया है। ऐसी भागीदारी शारीरिक या मानसिक प्रकृति की हो सकती है। भारत में महिलाओं के काम की परिभाषा के मामलों में, जेंडर अर्थशास्त्रीय समालोचकों द्वारा गंभीर पड़ताल की आवश्यकता है। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन, जिसे जमीनी स्तर से आंकड़े एकत्र करने की जिम्मेदारी सौंपी गई है, इन आंकड़ों के लिए विभिन्न दौर से गुजरता है और हर नए दौर के साथ आकड़ों को प्रामाणिक बनाने के लिए अधिक से अधिक बिंदुओं पर विवेचन करना पड़ता है। एनएसएसओ स्तर के विशेषज्ञ, आंकड़ा संग्रह की प्रक्रिया की प्रामाणिकता को सुनिश्चित करने के लिए, रास्ते की बाधाओं को हटाने के लिए बहुत कड़ी मेहनत करते हैं। एनएसएसओ द्वारा महिला श्रमिकों और गैर-श्रमिकों के लिए दी गई परिभाषा के गहन पड़ताल की आवश्यकता है। अब हम असंगठित क्षेत्र में महिला कामगारों की स्थिति की समीक्षा करेंगे।

2.3 असंगठित क्षेत्र में महिला कामगार

महिला कामगारों को दो व्यापक श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है:

- संगठित या औपचारिक क्षेत्र में काम करने वाली महिलाएँ, और
- असंगठित या अनौपचारिक क्षेत्र में काम करने वाली महिलाएँ।

यह वर्गीकरण संगठन की श्रेणी और उस क्षेत्र में रोजगार में समस्याओं की प्रकृति पर आधारित है। इन दोनों के बीच कार्यात्मक अंतर नहीं जैसे कृषि, उद्योग और सेवाओं के बीच होता है, क्योंकि ये कार्य दोनों क्षेत्रों में पाए जा सकते हैं। महिलाओं की स्थिति पर 1974 में बनी समिति के अनुसार इन दो श्रेणियों के बीच वास्तविक अंतर संगठन या उत्पादन संबंधों के चलते, सार्वजनिक नियंत्रण और विनियमन के पैठ की स्थिति के चलते है।

आंकड़ा संग्राहक एजेंसियों और वैज्ञानिक जांचकर्ताओं के अनुसार अनौपचारिक क्षेत्र में महिला कामगार, श्रमबल का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। श्रम शक्ति रिपोर्ट, 1988 के एक आंकलन के अनुसार, कुल महिला श्रमबलों में से 94 प्रतिशत असंगठित क्षेत्र में नियोजित

हैं। इनमें भी वे दुष्कर कार्य के हिस्सों में लगी हैं जैसे कि प्रति नग की दर से पारिश्रमिक पाने वाली, अनियत मजदूर, दिहाड़ी वाली मजदूरों की तरह। इस हिस्से के लिए श्रम कानूनों का अस्तित्व ही नहीं होता और वे समान मजदूरी, काम की मानवीय दशाओं, मातृत्व लाभ और सामाजिक सुरक्षा, श्रम के संरक्षण आदि जैसे कानूनों से वंचित हैं।

बॉक्स सं. 2.1

ग्रामीण और शहरी, दोनों क्षेत्रों में नियमित मजदूरी/सवेतन कर्मचारियों के वेतन और आकस्मिक मजदूरी में महिलाओं की मजदूरी उनके पुरुष समकक्षों की तुलना में अधिक असमान है।

अनौपचारिक क्षेत्र में मिलने वाले रोजगार के लक्षणों में अनियत मजदूरों का अधिक अनुपात, कम मजदूरी/वेतन, काम के अधिक घण्टे, कम कौशल और निम्न उत्पादकता आदि गिनाए जा सकते हैं। यहां न तो नौकरी की सुरक्षा है, न ही सामाजिक सुरक्षा। इस क्षेत्र में कार्य-स्थल पर यौन उत्पीड़न सर्वप्रमुख पेशागत जोखिम है। इस क्षेत्र में पेशे की अनन्य प्रकृति के चलते महिला कामगारों की, उनके अधिकारों हेतु लड़ने हेतु, लामबंदी को सुसाध्य बनाने के लिए कोई व्यापार संघ या श्रमिक संगठन भी नहीं होते। अपर्याप्त कानून और महिला कामगारों की रक्षा करने हेतु कानूनी सुरक्षाओं के अप्रभावी प्रवर्तन इस क्षेत्र में रोजगार के कुछ अन्य विशेषताएं हैं। उनकी गतिविधियों की विभिन्न प्रकृति के चलते, महिला कामगारों को निम्नलिखित व्यापक श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है:

क) कारीगरी और प्रति नग की दर से उत्पादन करने वाली मजदूरों सहित गृह-आधारित उत्पादक

ख) फुटपाथ वाले लघु-विक्रेता और फेरी वाली

ग) अनुबंधित मजदूर और अनियत मजदूर

घ) घरेलू सहायिका, पट्टेदार, मेहतर, धोबन आदि.

ङ) निर्माण कार्य और खेती तथा दूसरे प्राथमिक क्षेत्रों में हाथ से काम करने वाली मजदूर

च) पारंपरिक और गैर-पारंपरिक क्षेत्रों में प्रक्रियागत कार्यों में लगी महिलाएँ।

रोजगार की स्थिति के आधार पर उपरोक्त समूहों को तीन व्यापक श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है:

क) स्वरोजगार

ख) अपने घरों से बाहर मजदूरी करने वाले (निर्माण में लगे मजदूर, कृषि श्रमिक आदि) और घरों में रहकर काम करने वाले (गृह-आधारित मजदूर)

ग) परिवार में अवैतनिक काम करने वाले कामगार

असंगठित क्षेत्र, नीति निर्माताओं के सम्मुख सामाजिक न्याय की दो विकट समस्याएं प्रस्तुत करते हैं। इनमें से पहला है, कामकाजी आबादी का एक बड़ा हिस्सा अर्थव्यवस्था के हाशिए पर रहने के लिए मजबूर किया जा रहा है। और दूसरा है, असंगठित क्षेत्र में सस्ते श्रम की उपलब्धता को देखते हुए, अधिकांश नियोक्ता अपनी अधिकतर गतिविधियों को इन संगठनों की तरफ मोड़ रहे हैं। इसका अर्थ यह होगा कि भविष्य में पूरा का पूरा मजदूर वर्ग, विकास के उत्पादों में निरंतर कमतर हिस्सा प्राप्त करेगा। कोई भी लोकप्रिय सरकार लंबे समय तक इन संभावनाओं को नजरअंदाज नहीं कर सकती (निर्मला बनर्जी, 1985. पृष्ठ 7-8)।

रोजगार की प्रवृत्तियां

कार्य बलों के क्षेत्रीय वितरण के विश्लेषण से पता चलता है कि महिलाएँ अधिकांशतया कम वेतन वाली नौकरियों तक ही सीमित हैं। इस बात से आपको एक अंतर्दृष्टि मिल सकती है कि 1981 में, 81.6 प्रतिशत महिला कामगार (66.2 प्रतिशत पुरुषों की तुलना में) प्राथमिक क्षेत्र (कृषि और संबद्ध आज़ीविकाओं) में लगी हुई थीं। द्वितीयक (उद्योग) और तृतीयक (सेवा) क्षेत्रों में महिलाओं की संख्या मुश्किल से क्रमशः 8.9 प्रतिशत और 9.5 प्रतिशत थी। पुरुषों के मामले में ये अनुपात अधिक अर्थात् क्रमशः 13.9 प्रतिशत और 19.9 प्रतिशत हैं।

इतिहास की ओर गौर करते हुए कहा जा सकता है कि उद्योगों जैसे कि वस्त्रोद्योग और धातुकर्म उद्योगों में गिरावट, और कुम्हारों और लोहारों द्वारा किए जाने वाले अनगढ़ सेवाओं में गिरावट ने न केवल पुरुषों को बल्कि महिलाओं को भी बड़े पैमाने पर प्रभावित किया। हैरानी की बात है, गैर-कृषि रोजगार में महिलाओं की भागीदारी का प्रतिशत उस निवल स्तर तक फिर से पहुंच ही नहीं सका जिस उच्च स्तर पर वह 1911 में था, जबकि पुरुषों के लिए केवल एक अस्थायी झटका साबित हुआ। 1921 के बाद, गैर-कृषि रोजगार में पुरुषों की कुल संख्या और पूर्ण पुरुष रोजगार में उनका अनुपात दोनों में बढ़ोत्तरी हुई।

1911 से 1961 की अवधि के दौरान महिलाओं ने जितनी गैर-खेतिहर नौकरियां गंवाईं उनमें से केवल आठ प्रतिशत कार्यों की गणना 'विशिष्ट रूप से महिलाओं के लिए' कार्य की कोटि में की गई और बाकी बचे 92 प्रतिशत मामलों में पुरुषों ने महिलाओं को बहुत आराम से उनके पुराने काम से प्रतिस्थापित कर दिया। (निर्मला बनर्जी, 1985, पृष्ठ 14)।

ग्रामीण असंगठित क्षेत्र में आने वाले रोजगार का एक बड़े हिस्से पर महिलाओं का कब्जा है। ग्रामीण परिवेश में महिलाओं के रोजगार मूल रूप से कृषि, डेयरी, पशुपालन, मत्स्य पालन, सामाजिक और कृषिवानिकी, खादी और ग्रामोद्योग, हथकरघा, हस्तशिल्प और रेशम कीट पालन जैसे 9 क्षेत्रों में समाहित हैं। इनमें से पहले पांच क्षेत्रों को मोटे तौर पर कृषि और संबद्ध व्यवसायों के रूप में वर्गीकृत किया गया है, और अंतिम चार ग्राम एवं लघु उद्योग क्षेत्र के रूप में वर्गीकृत हैं।

आगे आने वाले उप-अनुभाग असंगठित क्षेत्र में रोजगार के विभिन्न पहलुओं में महिला श्रमिकों की स्थिति से अवगत कराएंगे.

2.4.1 संस्थागत असंगठित क्षेत्र

कृषि

यह क्षेत्र सर्वाधिक प्रतिशत महिलाओं को अपने में समाहित करता है और यही महिलाओं के लिए सर्वाधिक सुलभ रोजगार क्षेत्र है। 1971 की जनगणना के अनुसार, 80.1 प्रतिशत महिला श्रमिक कृषि क्षेत्र में थीं जबकि संख्या रूप में 1951 में 18.3 मिलियन की बजाय 1971 में उनकी संख्या 9.2 मिलियन हो गई थी। इसके लिए बढ़ती हुई गरीबी जिससे भूमिहीनता और पारिवारिक खेतों पर उत्पादक रोजगार अवसरों में अपर्याप्त वृद्धि हो पाई को जिम्मेदार ठहराया गया जिसके चलते सक्रिय खेती से महिलाओं को विमुख कर दिया गया। महिला खेतिहर मजदूरों की संख्या में 1951 के 12.6 मिलियन से, 1971 में 15.7 मिलियन तक की वृद्धि भी रोजगार अवसरों के स्तर में गिरावट और बढ़ती हुई गरीबी की सूचक थी।

महिला कृषि मजदूरों के लिए मजदूरी की कम दरों के कारणों में रोजगार की असंगठित प्रकृति, ऐसे मामले जिनमें बाहरी मजदूरों को पारिवारिक सदस्यों द्वारा स्थानांतरित किया जा सकता है, श्रम की मौसम के अनुसार जरूरत और कुछ कार्यों जैसे कि निराई, रोपाई

आदि का परंपरागत वर्गीकरण महिलाओं के श्रम के तौर पर एकाधिकृत करना रहा है। खेतिहर मजदूरों के लिए, न्यूनतम मजदूरी सरकार द्वारा तय की जाती है और इनकी आवधिक समीक्षा भी की जाती है लेकिन दुर्भाग्य से यह अधिनियम भारत के सभी राज्यों में प्रभावी रूप से लागू नहीं किया जाता।

समान कार्य के लिए मजदूरी में अंतर के अलावा, महिलाओं द्वारा परंपरागत रूप से किए जाने वाले कार्यों जैसे बुआई, निराई, रोपाई, ओसाई, गहाई, और कटाई आदि के लिए सामान्य तौर पर पुरुषों द्वारा किए जाने वाले कार्य जैसे जुताई की अपेक्षाकृत मजदूरी की कम दरों का निर्धारण करना भी महिलाओं के भेदभाव को और मजबूत करता है। कृषि क्षेत्र में महिला श्रमिकों द्वारा सामना किए जाने वाली दूसरी समस्या प्रतिदिन 7-9 घंटे के कार्य को दैनिक कार्य के बराबर मानने की परम्परा भी है। कृषि में आधुनिक प्रौद्योगिकी के प्रवेश और खेतिहर कार्यों में इसके उपयोग की शुरुआत से भी खेती में महिलाओं की भागीदारी पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है।

डेयरी उद्योग

डेयरी उद्योग में महिलाओं का योगदान, पशुओं के लिए चारे के संग्रह से लेकर, चारा काटने और जानवरों की सफाई और धुलाई और उनकी देखभाल तक विस्तृत है। यहां तक कि सहकारी दुग्ध समितियों में भी महिलाओं को शायद ही कभी सदस्य बनने की अनुमति दी जाती है और उन्हें प्रबंध समिति के सदस्य के रूप में सहकारी समितियों को संचालित करने का मौका शायद ही कभी दिया जाता है। सहकारी समितियों के दायरे से बाहर होने के कारण ही वे दूध के लिए उचित मूल्य प्राप्त करने में विफल रहती हैं क्योंकि अच्छे विपणन केन्द्र स्थानीय ऋणदाताओं के चंगुल में हैं।

भवन-निर्माण कार्य

भवन-निर्माण कार्यों में भाड़े के श्रमिकों के रूप में महिलाओं को इसके अस्थायी और लगातार स्थान बदलने की प्रकृति के चलते बहुत झेलना पड़ता है। इसके अतिरिक्त हर तरह के मौसम में अत्यधिक श्रम वाले कार्य तथा बिचौलियों और ठेकेदारों के शोषण जैसी कठिनाइयों से ग्रसित हैं। निर्माण कार्य स्थलों में जल्दी-जल्दी बदलाव और उनके कार्य की अस्थिरता उन्हें और उनके बच्चों को प्राथमिक सुविधाओं जैसे स्वास्थ्य, शिक्षा, राशन कार्ड आदि से वंचित रखता है। उनकी गिनती सामूहिक रूप से अकुशल मजदूरों के रूप में की जाती है जबकि वे कुछ विशेष कौशल वाले कार्य भी करती हैं। अधिक मजदूरी वाली और तथाकथित कुशलता आधारित कार्य, निरपवाद रूप से पुरुषों के लिए आरक्षित हैं। स्व-नियोजित महिलाओं पर बने आयोग ने इस संबंध में ध्यान आकर्षित किया था कि भवन निर्माण कार्यों में श्रमिकों के नियोजन में परिवर्तनशीलता पुरुषों की अपेक्षा महिलाओं के मामले में अधिक स्पष्ट है। अर्थात इस क्षेत्र में जब कभी मजदूरों की मांग में कोई वृद्धि होती है, पुरुष श्रमिकों की तुलना में महिला श्रमिकों का उपयोग बहुत अधिक होता है। दूसरी ओर, जब कभी समग्र व्यवसाय में कोई गिरावट आती है, पुरुष श्रमिकों की तुलना में महिला श्रमिकों में गिरावट अधिक तीव्रता से प्रतिबिंबित होती है। हालाँकि इन मजदूरों की रक्षा करने के लिए न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, अनुबंधित श्रमिक अधिनियम और अंतर-राज्य प्रवासी मजदूर अधिनियम जैसे विभिन्न अधिनियम इस क्षेत्र में लागू हैं, परंतु व्यवहार में नियोक्ताओं द्वारा इनका खूब उल्लंघन किया जाता है।

उत्खनन एवं खनन

उत्खनन और खनन एक दूसरा महत्वपूर्ण क्षेत्र है जिसने महिलाओं को बहुत बड़ी संख्या में नियोजित किया हुआ है। भूमिगत खदानों में महिलाओं और बच्चों को काम करने से बचना

चाहिए परन्तु छिपे तौर पर भूमिगत खदानों में बाल श्रम का बहुतायत से उपयोग किया जाता है। इस क्षेत्र में महिलाओं द्वारा सामना किए जाने वाली प्रमुख समस्याओं में अनियत मजदूरी का उच्च दर; कम मजदूरी; काम की श्रमसाध्य और खतरनाक प्रकृति; कार्य सुरक्षा की कमी और श्रम कानूनों का न लागू होना शामिल हैं।

गृह आधारित कार्य

अंतर्राष्ट्रीय और घरेलू पूँजी दोनों अतिरिक्त और ऊपरी लागत को कम करने के लिए बहुत तेज़ी से घर से काम करने वालों को खोज रहे हैं जिससे कि मुनाफे की सीमा को अधिकतम किया जा सके। भारत में, जो महिलाएँ तमाम प्रकार के उत्पादों (जैसे कुर्ता, शर्ट, मेजपोश, साड़ी, रुमाल आदि) पर कढ़ाई की बढ़िया कलाकारी करती हैं, वे भी इसी तरह की स्थिति से पीड़ित हैं। एक आंकलन के अनुसार इस क्षेत्र में, कुल श्रमिकों में से 97 प्रतिशत महिलाएँ और सिर्फ 3 प्रतिशत पुरुष हैं जो कढ़ाई की तरह के कार्यों में जैसे कि काटने, मुद्रण, सिलाई आदि में लगे हुए हैं। कुल महिला श्रमिकों में से 95.8 प्रतिशत अनुबंधित श्रमिक हैं, महिलाओं की स्थिति पर बनी समिति ने 1974 में इस ओर ध्यान दिलाया था कि गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले सभी मजदूरी का काम करने वाले श्रमिक प्रति व्यक्ति 40 रुपये प्रति महीना कमाते थे।

खाद्य प्रसंस्करण

खाद्य प्रसंस्करण एक अन्य क्षेत्र है जो सबसे पुराना गृह-आधारित उद्योग है, जहां महिलाएँ बड़ी संख्या में अपनी भूमिका निभाती हैं। इस उद्योग में सब्जियों, फलों, अचारों, चटनी, मसाले आदि के प्रसंस्करण जैसे विस्तृत प्रसार वाली वस्तुएं शामिल हैं। हाल के दिनों में यह क्षेत्र एक निर्यातोन्मुखी उद्योग के रूप में उभर रहा है,जहां इसके 30 प्रतिशत उत्पादों का निर्यात किया जा रहा है। सामान्यतया इस क्षेत्र के कार्य मौसम आधारित होते हैं और इन उद्योगों में लगभग 40 प्रतिशत से 50 प्रतिशत कर्मचारियों को नियमित काम नहीं मिलता है। इस क्षेत्र में अनुबंध को आगे दूसरे छोटे ठेकेदारों को सौंप देने की परंपरा प्रचलित है और उत्पादन के परंपरागत तरीकों में महिला श्रमिकों को अधिक तरजीह दी जाती है क्योंकि उन्हें बहुत कम मजदूरी देनी पड़ती है और उनकी मांग भी सामान्यतया कम रहती है।

2.4.2 गैर-संस्थागत असंगठित क्षेत्र

असंगठित क्षेत्र में आने वाले कुछ प्रमुख गैर-संस्थागत व्यवसाय निम्न प्रकार हैं।

घरेलू कार्य

घरेलू नौकर और कामगार, खासतौर पर शहरी अर्थव्यवस्था में, सीढ़ी के निचले पायदान पर होते हैं। काम का **लैंगिक विभाजन** और कार्य आवंटन का स्वरूप मुख्य रूप से घरेलू सेवा को, महिला प्रधान उद्योग की तरह प्रस्तुत करता है। घरेलू काम में तमाम प्रकार की नौकरियां जैसे झाड़ू लगाना, झाड़ना, खाना पकाना, कपड़े और बर्तन धोना, खरीदारी करना, बच्चों की देखभाल करना आदि शामिल हैं। संक्षेप में, इसके अन्तर्गत वह सभी प्रकार के घरेलू कार्य आते हैं जो पितृसत्तात्मक समाज में एक महिला की भूमिका माने जाते रहे हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में, आंतरिक घरेलू कार्यों के साथ पारिवारिक कृषि आधारित काम भी शामिल रहते हैं।

यह श्रमिकों के सबसे दुर्बल समूहों में से एक है क्योंकि घरेलू कामों में लगी हुई इन लाखों महिलाओं की सुरक्षा के लिए सरकार की ओर से लगभग कोई कानून या नियम नहीं हैं। इस प्रकार के उद्योग की सबसे सामान्य विशेषताओं में बेहद कम मजदूरी दर, काम के लंबे

और अनियमित घंटे और श्रमिक-संगठनों का अभाव शामिल हैं। इस तरह के उद्योग की एक और विशिष्ट तथ्य यह है कि इनमें सारे कार्य उपठेकेदारों, बिचौलियों की श्रृंखला के माध्यम से कराए जाते हैं जो प्रकारांतर से महिला कामगारों का बड़े पैमाने पर शोषण करते हैं। घर पर किए जाने वाले कार्यों पर आधारित उत्पादों के कुछ उदाहरणों में शामिल हैं– बीड़ी के बण्डल, पेपर बैग, तैयार वस्त्र, कपास से रूई बनाना, हाथ की कढ़ाई, अनाज की सफाई, मसाला बनाना, माचिस की तीलियाँ बनाना, अगरबत्ती बनाना, कागज के रोल तैयार करना, छोटे विद्युत और इलेक्ट्रॉनिक आइटम्स की फिटिंग, औद्योगिक वस्तुओं पर लेबलिंग, कपड़ों पर जरी करना, कृत्रिम गहने पर काम करना इत्यादि।

बीड़ी बनाना

1974 में महिलाओं की स्थिति पर बनी समिति ने अपने अध्ययन में कहा था कि बीड़ी बनाना, देश में सबसे अधिक मेहनत वाले उद्योगों में से एक के रूप में कुख्यात है। इसमें मजदूरी हमेशा निर्मित बण्डलों की संख्या पर आधारित होता है। काम के घंटे और बोनस भुगतान बिल्कुल अनियमित हैं। बीड़ी बनाने वाले श्रमिक सांस के संक्रमण, फेफड़ों के संक्रमण, तपेदिक और कैंसर जैसे रोगों से जूझते हैं।

माचिस बनाना

इस उद्योग का संगठन भी बिल्कुल बीड़ी उद्योग के समान है। तमिलनाडु के शिवकाशी में इसके बड़े कारखाने हैं जहां बड़े पैमाने पर बच्चे और महिलायें घर पर काम करती हैं, जबकि पुरुष कारखाने में काम करते हैं। यहाँ कोई श्रमिक संगठन नहीं है और इन श्रमिकों की सुरक्षा के लिए किसी प्रकार की व्यवस्था नहीं है। प्रति नग दर से मजदूरी, काम के अत्यधिक घंटे, रोजगार सुरक्षा की कमी और कल्याणकारी सुविधाओं का अभाव के चलते इनका अत्यधिक शोषण होता है।

THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

सिलाई और कढ़ाई

रेडीमेड वस्त्र के मामलों में आमतौर पर महिलाएँ अपने घरों में सिलाई का काम करती हैं। महिलाएँ खुद व्यापारियों से कपड़े इकट्ठा करती हैं, उन्हें अपने घरों में सिलती हैं और तैयार उत्पादों को व्यापारियों तक पहुंचा कर अगले खेप की सामग्री इकट्ठा कर आती हैं। इस तरह इन कार्यों में शामिल जगह, परिवहन, सिलाई मशीनों के रखरखाव और धागे इत्यादि की पूरी लागत व खर्च महिलाओं को सहन करना पड़ता है। मजदूरी का भुगतान आमतौर पर सप्ताह या महीने में और निरपवाद रूप से प्रति नग दर से किया जाता है। चूंकि ये मजदूर बिखरे हुए और असंगठित होते हैं, अतः संगठित विरोध की संभावना न होने के कारण बहुत कम मजदूरी दी जाती है। मौजूदा श्रम कानूनों को भी इन पर लागू नहीं किया जा सकता क्योंकि स्थापित मानदंडों और नियमों के अनुसार इन्हें श्रमिक माना ही नहीं जाता और यदि कभी इन कानूनों को लागू किया जाता है तो भी उनका बुरी तरह से उल्लंघन किये जाता है। इसके अलावा, इस क्षेत्र में महिलाएँ अधिक हैं क्योंकि इसमें अधिकतर घर पर किये जाने वाले काम हैं और इसलिए वे किसी भी समय अपने नियोक्ताओं की इच्छा पर काम पर रखी या निकाली जा सकती हैं। किसी औपचारिक अनुबंध के अभाव में, काम करने की उनकी स्थितियां अक्सर उत्पीड़क होती हैं और मालिक हमेशा जिम्मेदारियों से बच सकता है। महिला मजदूर सामाजिक सुरक्षा लाभों जैसे भविष्य निधि, ग्रेच्युटी, पेंशन, चिकित्सा सुविधाएं और सवेतन अवकाश से वंचित होती हैं। इन घरेलू श्रमिकों की एक अनूठी विशेषता होती है कि प्रत्येक श्रमिक दूसरे श्रमिकों से बिल्कुल अलग-थलग होता है और उन्हें संगठित करने की समस्या लगभग अकरणीय है।

झाड़ू लगाने और कूड़ा उठाने का काम

हमारे देश में आमतौर पर सरकार और नगरपालिकाएं महिला सफाई कर्मियों की नियमित नियोक्ता होते हैं। राष्ट्रीय श्रम आयोग के अध्ययन समूह ने इस बात को उल्लिखित किया था कि महिलाओं को दिए जाने वाले मातृत्व अवकाश और दूसरे लाभ तथा काम की अन्य शर्तों को देखते हुए नगरपालिका अधिकारियों द्वारा महिला सफाई कर्मियों की भर्ती को हतोत्साहित करने की प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है। सामान्य तौर पर वे न्यूनतम मजदूरी अधिनियम द्वारा शासित होती हैं। मजदूरी और काम के घंटे एक स्थानीय निकाय से दूसरे स्थानीय निकायों में अलग-अलग होते हैं। अधिकांशतया उन्हें अंशकालिक नौकरियां दी जाती हैं वह भी साप्ताहिक आराम, मातृत्व अवकाश या सवेतन छुट्टियों, वर्दी या मकान किराया भत्ता के बिना।

ठेला लगाने वाली और फेरी वाली महिलाएँ

घूमकर बेंचने वाली महिलाएँ और फेरीवाली, सब्जी, फूल, फल, कपड़े, बर्तन, चूड़ियां, खिलौने और तैयार भोजन इत्यादि के व्यापार में लगी हुईं महिलाएँ अत्यधिक दुर्बल और शोषण के प्रति प्रवणशील समूह के तौर पर एक दूसरा समूह निर्मित करती हैं जो अधिकारियों और समुदाय द्वारा लगातार शोषित होने को अभिशप्त होती हैं। इस सन्दर्भ में स्व-नियोजित महिलाओं पर बनी राष्ट्रीय समिति ने ध्यान दिलाया था कि भारतीय पुलिस अधिनियम, भारतीय रेलवे अधिनियम और टाउन प्लानिंग अधिकारियों द्वारा इन्हें असामाजिक तत्वों के रूप में देखा जाता है। शहरी नियोजक अक्सर उन्हें नियोजन में रुकावट के तौर पर देखते हैं और उनकी गतिविधियों को अनधिकृत करार देते हैं, इस तथ्य के बावजूद कि यह प्रणाली रोजगार के अवसरों को उपलब्ध कराने के साथ ही माल के सस्ते और सुविधाजनक वितरण के अवसर प्रदान करती है।

एक महिला विक्रेता छोटे पैमाने पर एक मामूली राशि कमा पाने के लिए दिन में अधिकांशतया 10-12 घंटे मेहनत करती है। शहरी क्षेत्रों में, वे बड़े पैमाने पर गहन आबादी वाले क्षेत्रों जैसे कि सार्वजनिक बाजारों, परिवहन केन्द्रों, वाणिज्यिक केंद्रों और मनोरंजन क्षेत्रों में और उसके आसपास बसे होते हैं। इन विक्रेताओं की समस्याओं में पूँजी की कमी, विपणन के लिए जगह और पुलिस और अन्य अधिकारियों द्वारा उत्पीड़न जैसी समस्याएं शामिल हैं।

स्वरोजगार में नियोजित महिलाएँ

मोटे तौर पर देखा जाए तो हमारे देश में स्वरोजगार एक प्रमुख रोजगार क्षेत्र का गठन करता है। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन के अड़तीसवें चक्र के अनुसार कुल 98.4 मिलियन महिला कामगारों में से 59 मिलियन महिला कामगार (60.1 प्रतिशत), स्वरोजगार में नियोजित थीं, जो पुरुषों की स्वरोजगार प्रतिशतता 55.9 प्रतिशत से कुछ अधिक थीं।

कुछ ऐसी समस्याएं हैं जिनका सामना स्वरोजगार में नियोजित महिलाओं को करना ही पड़ता है जैसे कि बुनियादी सुविधाओं की कमी और बाजार आधारित मांगों की अपर्याप्त जानकारी। इसके अतिरिक्त बच्चों के देखभाल की सुविधाओं के अभाव, असुरक्षित परिवहन, अपर्याप्त कार्यस्थल और प्रशिक्षण की कमी से महिलाएँ और अधिक असमर्थ हो जाती हैं। संस्थागत ऋण सुविधाओं के अभाव में बिचौलियों द्वारा शोषण का षिकार भी बनती हैं।

आगे पढ़ने से पूर्व पढ़े हुए अनुभागों का आंकलन करने के लिए निम्नलिखित अभ्यास करें।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए

1) रोजगार के दो व्यापक क्षेत्रों का नाम बताइए।

2) संस्थागत और गैर-संस्थागत रोजगारों के अन्तर्गत आने वाले कतिपय व्यवसायों के नाम बताइए।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

आगे आने वाले अनुभागों में आप पढ़ेंगे कि असंगठित क्षेत्र में काम करते समय महिला श्रमिकों द्वारा किन समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

2.5 असंगठित क्षेत्र में महिला कामगारों की समस्याएं

असंगठित क्षेत्र में महिला कामगारों को निम्नलिखित समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

निम्न आय अर्जनः असंगठित क्षेत्र में महिला कामगारों द्वारा निम्न आय अर्जन के कारण हैं:

क) कौशल की कमी के चलते निम्न उत्पादकता।

ख) समान वेतन अधिनियम और न्यूनतम वेतन कानूनों का कार्यान्वयन न होना।

ग) बिचौलियों / ठेकेदारों द्वारा शोषण।

घ) नए कुशलताओं और प्रौद्योगिकी अपनाने के लिए प्रशिक्षण के अवसरों का अभाव।

ङ) रोजगार की अनियत प्रकृति का उच्च अनुपात।

अब हम असंगठित क्षेत्र में महिला कामगारों द्वारा अर्जित निम्न मजदूरी के कारणों के बारे में विस्तार से पढ़ेंगे।

मशीनीकरण

शिक्षा के सीमित अवसरों के कारण नई खेतिहर तकनीकों को अपनाए जाने के चलते कृषि में महिलाओं की भागीदारी बहुत हद तक प्रभावित हुई है। 1961 से 2011 के पांच दशकों के दौरान आधुनिक जड़ी-बूटी और चावल मिलों, पिसाई, मछली पकड़ने वाले समुदायों के मशीनीकरण, पावरलूम के उपयोग ने लगभग 84,000 महिला हथकरघा बुनकरों को बेरोजगार कर दिया है।

प्रशिक्षण का अभाव

असंगठित क्षेत्र में अधिकांश कामगारों के पास पेशेवर प्रशिक्षण के नाम पर कुछ भी नहीं होता। कुछ व्यक्तिगत सेवाओं जैसे कि नर्सिंग और खाना पकाने के साथ-साथ कुछ गैर-घरेलू कामों जैसे सिलाई, बिजली की फिटिंग या कांच के कामों ने कुछ आरंभिक प्रशिक्षण नियमित तौर पर कराए जाते हैं। लेकिन अधिकांश श्रमिकों को जो भी कार्य वे करते हैं, उसके लिए उन्हें बहुत ही कम लगभग नही ंके बराबर औपचारिक प्रशिक्षण मिला होता है। ज्यादातर कामगारों ने घर पर ही परिवार के अन्य सदस्य से वह कुशलता सीखी होती है।

इस तरह के प्रशिक्षण के दो प्रभाव देखने में आते हैं। पहला तो यह कि कामगार तुरन्त किए जाने वाले कामों के लिए ही कुछ निर्देश प्राप्त करता है। अर्थात एक पूर्ण पेशेवर या व्यापार से संबंधित कौशल सीखने की कोई गुंजाइश नहीं होती। इस प्रकार, यदि महिला कामगार अपने लिए कुछ अच्छे कौशल वाले काम की मांग करती है तो उसके लिए उसे किन्हीं मान्यता प्राप्त संस्थाओं से कुछ अन्य प्रशिक्षण प्राप्त करने होंगे। ऐसा स्पष्ट रूप से दर्जी के मामले में देखा जा सकता है जो एक सिलाई मशीन पर सिर्फ सिलने का काम करती हैं और आमतौर पर न कटिंग सीखती है और न किसी प्रकार की कढ़ाई। दूसरा असर यह होता है कि कामगार सिर्फ अपने काम से संबंधित मूलभूत विषय की आधारभूत बातों को समझती हैं उनमें कोई नवाचार या नई सोच की गुंजाइश नहीं रह जाती।

श्रम कानूनों के संरक्षण का अभाव

सरकार ने महिला कामगारों के हितों की रक्षा और उनके संरक्षण हेतु तमाम कानूनों जैसे कि समान पारिश्रमिक अधिनियम, 1976, मातृत्व लाभ अधिनियम, 1961 और फैक्ट्री एक्ट, 1948 के अन्तर्गत महिला श्रमिकों के लिए विशेष प्रावधान इत्यादि को अधिनियमित किया है। असंगठित क्षेत्रों में अस्थायी और अनियत महिला कामगार मातृत्व सुरक्षा कानून द्वारा संरक्षित नहीं हैं जिससे गर्भावस्था के आखिरी और अग्रिम चरणों में भी उन्हें काम करते रहना पड़ता है। इतना ही नहीं बीमारी या गर्भावस्था के दौरान अनौपचारिक क्षेत्रों के मालिक न केवल कोई सुविधा प्रदान करने में विफल रहते हैं बल्कि इन स्थितियों को महिला कामगार को काम से निकालने के लिए पर्याप्त आधार भी मानते हैं। असंगठित क्षेत्र की महिला कामगारों को क्रेच सुविधाओं, सवेतन छुट्टियों और अन्य सामाजिक सुरक्षा लाभों से पूर्णतया वंचित रखा जाता है।

संगठन का अभाव

असंगठित क्षेत्र में महिला कामगारों में संगठन और संघटन का अभाव, उनकी संगठनात्मक ताकत में बाधा डालता है। असंगठित क्षेत्र में, महिला श्रमिकों को तरह-तरह से शोषित किया जाता है जैसे कि निम्न मजदूरी दर, वस्तुओं की गिनती के आधार पर मजदूरी, काम के लंबे घंटे, वेतन से संबंधित श्रम कानूनों का लागू न किया जाना, काम की स्थिति, बीमा, भविष्य निधि, मातृत्व अवकाश, क्रेच सुविधाएं इत्यादि की अनुपलब्धता।

संसाधनों तक पहुंच का अभाव

बैंक और अन्य औपचारिक संस्थान महिलाओं को ऋण देने के मामलों में ज्यादा भेदभाव करते हैं और उनसे ऋण के बदले गारण्टी के रूप में चल या अचल संपत्ति जमानत पर रखने को कहते हैं। परन्तु तथ्य यह है कि हमारे देश में महिलाओं की ऐसी संपत्तियों तक पहुंच ही नहीं है।

सहायक सेवाओं का अभाव

असंगठित क्षेत्र की महिला कामगारों के लिए बच्चों को लेकर एक और समस्या यह है कि चाइल्ड केयर या बच्चों के लिए डे केयर सेंटर जैसी सहायक सेवाओं तथा विशेषकर लड़कियों को स्कूल भेजने की सुरक्षित व्यवस्थाओं का अभाव है।

यौन उत्पीड़न

हालाँकि सभी क्षेत्रों की महिला श्रमिकों को ऐसी समस्या का सामना करना पड़ता है, अनौपचारिक क्षेत्र के कार्यस्थल महिलाओं के यौन उत्पीड़न के संदर्भ में अधिक संवेदनशील हैं। मछली सुखाने, भवन निर्माण, चूने-गारे के काम आदि में मुख्य ठेकेदार अपने अधीन कई उपठेकेदारों को रखते हैं, जो काम देने के बदले अक्सर महिला श्रमिकों का शोषण करते हैं और उनसे यौन आग्रह करते हैं।

1970 से 2013 की अवधि के दौरान, भारत में, मुख्य रूप से असंगठित कार्य में महिला कामगारों की संख्या में उल्लेखनीय वृद्धि देखी गई। महिलाओं के आंदोलनों ने उनकी समस्याओं पर प्रकाश डाला और उनकी लामबंदी करने, उन्हें संगठित करने के प्रयास किए। नारीवादी अध्ययनों ने ऐसी श्रम प्रक्रियाओं और श्रम संबंधों के बारे में लोगों में जागरूकता पैदा की जो यौन शोषण को बनाए रखते हैं। 2013 में, भारत ने, कार्यस्थलों पर यौन शोषण की रोकथाम हेतु अधिनियम लागू किया जिसके लिए इस समय नियम निर्धारित किए जा रहे हैं। यह अधिनियम अर्थव्यवस्था के सभी क्षेत्रों में काम करने वाली कामकाजी महिलाओं को अपने अन्तर्गत शामिल करता है।

THE PEOPLE'S UNIVERSITY

विभिन्न स्तरों पर नीतियों में बदलाव लाने के लिए महिला श्रमिकों के पक्ष में किए गए विरोध और लामबंदियों के बारे में हम दूसरी इकाइयों में विस्तार से व्याख्या करेंगे।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए

1) असंगठित क्षेत्र में महिलाओं के रोजगार की प्रवृत्ति क्या है?

2) भारत में असंगठित क्षेत्रों में काम करने वाली महिलाओं को किन समस्याओं का सामना करना पड़ता है?

अब हम संगठित क्षेत्र में महिला श्रमिकों की स्थिति के बारे में पढ़ेंगे।

2.6 संगठित क्षेत्र में महिला कामगार

स्वतंत्रता के बाद की अवधि में, भारत ने औद्योगीकरण और उसके चलते सामाजिक संरचना में हुए बदलावों के कारण तेजी से संक्रमण का एक दौर देखा। उच्च शिक्षा और प्रशिक्षण हेतु व्यापक रास्तों के खुल जाने से महिलाएँ संगठित क्षेत्र में प्रवेश करने के लिए अधिक सक्षम होकर उभरीं। समग्र तौर पर आर्थिक आवश्यकता और इस बात की जागरूकता, कि नौकरियां आर्थिक बेहतरी के साथ-साथ उच्चतर सामाजिक गतिशीलता और स्वंतत्रता प्रदान करती हैं, ने अधिक से अधिक महिलाओं को व्यवसायों के विशाल क्षेत्र में प्रवेश करने के अवसरों का लाभ उठाने के लिए प्रेरित किया।

1940 के बाद पिछले कई दशकों के दौरान, महिला कामगार सवेतन श्रमबल में बढ़ी हुई संख्या में प्रवेश कर रही हैं। इस अवधि के दौरान मध्यम वर्ग, शहरी, शिक्षित, उच्च जाति की महिलाओं ने उल्लेखनीय तौर पर घर से बाहर जाकर किए जाने वाले कामों में अपनी भागीदारी बढ़ाई। स्वतंत्रता आंदोलन में महिलाओं की भागीदारी और स्वतंत्रता से पहले की अवधि में महिलाओं को शिक्षा प्रदान करने के महत्व को मिली स्वीकृति ने मध्यम वर्गीय महिलाओं को ऐसे अवसर प्रदान किए कि लम्बे समय तक चलने वाली अर्थव्यवस्था में सवेतन कार्य की वृहत्तर दुनिया में प्रवेश कर सकें।

गैर-भेदभाव वाले संवैधानिक प्रावधान, तृतीयक क्षेत्रों में रोजगार अवसरों के विस्तार, उच्चतर शिक्षा प्राप्त करने के लिए अधिक अवसरों, शहरी मध्यमवर्गीय परिवारों में पारिवारिक आय बढ़ाने के लिए बढ़ते दबाव, कुछ ऐसे कारक हैं जिनके कारण श्रम बाज़ार में मध्यम वर्ग की महिलाओं की भागीदारी और बढ़ी।

घर से बाहर निकलकर सवेतन नौकरियों में प्रवेश करने के लिए महिलाओं के पास और कई प्रेरक कारक थे। विवाहित शिक्षित महिलाओं के मामलों में लाभदायक रोजगार को चुनने के महत्वपूर्ण प्रेरणाएं निम्नवत हैं:

क) खाली समय का व्यस्त उपयोग

ख) आर्थिक स्वायत्तता

ग) गरिमा और स्वाभिमान के साथ जीना

घ) अपनी स्वयं की पद और प्रतिश्ठा प्राप्त करने के लिए

ड.) प्राप्त उच्च और व्यावसायिक शिक्षा का उचित उपयोग करना

च) कॅरियर और आत्मबोध की महत्वाकांक्षा

छ) समुदाय और समाज की सेवा और बड़े स्तर पर करना।

महिलाओं के रोजगार को 1970 के दशक में स्वीकार किया गया खासतौर पर आर्थिक संकट के दौरान और जो महिलाएँ व्यावसायिक शिक्षा प्राप्त कर चुकी थीं मगर "काम नहीं करती थीं" उन्हें अपनी शिक्षा और प्रशिक्षण बेकार करने वाली समझा जाने लगा। सार्वजनिक क्षेत्र के अधिक विस्तृत होते जाने के कारण भी मध्यम वर्गीय महिलाओं का रोजगार में प्रवेश अधिक बढ़ा। अर्ध-सरकारी उपक्रमों में भी महिला रोजगार की संख्या बढ़कर दोगुनी हो गई।

कुछ खास नौकरियों और विशेष प्रकार के कामों में ही महिलाओं का संकेंद्रण और अपनी कुशलता के अनुरूप काम न पाना महिलाओं के लिए चिंता के विषय हैं। सभी देश इस समस्या और इसके प्रभाव के बारे में समझ चुके हैं और इस समस्या से सख्ती के साथ निबटने के लिए पहले ही कार्रवाई शुरू कर चुके हैं। इस मुद्दे का जितना हिस्सा यूनेस्को से जुड़ा है, उतने के लिए उसने उल्लेखनीय महत्व दिया है। इस बात के सभी हामीदार थे कि सभी मानव चाहे वे पुरुष हों या स्त्री एकसमान हैं, और शिक्षा, प्रशिक्षण तथा अपनी कुशलता/योग्यता के अनुसार रोजगार के अवसरों के प्रति भी उनके अधिकार समान हैं। इस मुद्दे पर और जोर देने के लिए तथा सबके सम्मुख रखने के लिए यूनेस्को ने जापान, तत्कालीन जर्मन गणराज्य संघ और अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के सहयोग से चार अलग-अलग स्थानों पर चार सम्मेलनों का आयोजन किया।

पैंतालिस साल पहले, शिक्षण के अलावा आमतौर पर केवल तीन और व्यवसायों क़ानून, स्वास्थ्य और मंत्रालयों को महिलाओं के लिए उल्लेखनीय तौर पर महत्व प्राप्त नौकरियों का क्षेत्र माना जाता था। उन दिनों महिलाओं को कानूनी रुकावटों और जन-भावनाओं की वजह से इन व्यवसायों में काम करने से बिल्कुल रोक दिया गया था। महिलाओं के लिए अध्यापन के कार्य की सिफारिश इसलिए की गई कि इसे इस तरह व्यवस्थित किया जा सकता था कि महिलाएँ सिर्फ समान जेंडर के लोगों के साथ आपसी संवाद कर सकें जो नारीत्व की उनकी परंपरागत भूमिका के साथ किसी प्रकार का संघर्ष उत्पन्न नहीं करता था। इसके अलावा अध्यापन के कार्य में काम के कम घंटे, छुट्टियाँ आदि अन्य आकर्षण थे जो वास्तव में यह भी संभव बनाते थे कि महिलाओं की पारंपरिक भूमिका में कोई व्यवधान नहीं आए।

भारत में संगठित क्षेत्र, जो प्राथमिक तौर पर मुख्यतया सार्वजनिक क्षेत्र और गैर-खेतिहर क्षेत्र की स्थापनाओं से मिलकर बनता है, देश की कुल वास्तविक कार्यबल का एक आठवां हिस्सा समाहित किए हुए है। इसमें भी महिलाओं की हिस्सेदारी वर्ष 1980-91 के दौरान 12-2 प्रतिशत रही। मोटे तौर पर एक समझ बनाने के लिए यह तथ्य जानना महत्वपूर्ण है कि संगठित क्षेत्र में महिलाओं के रोजगार की कुल संख्या 1971 में 19.30 लाख से बढ़कर 1986 में लगभग 33.41 लाख हो गई। (www.indiastatistics.com)

संगठित क्षेत्र के अन्तर्गत, सार्वजनिक क्षेत्र में महिलाओं का रोज़गार 1971 में 8.62 लाख से बहुत तेजी से बढ़कर 1986 में 19.30 लाख हो गया। निजी क्षेत्र में भी महिलाओं के रोजगार में वृद्धि हुई हालाँकि इससे थोड़ी कम दर से अर्थात 1971 में 10.67 लाख से बढ़कर 1986 में 13.07 लाख हो गई।

चूंकि महिलाएँ कार्यालयों में बड़े स्तर पर अधिकांशतः शिक्षक, नर्स, क्लर्क और सेक्रेटरी के रूप में नौकरी करती हैं इसलिए सार्वजनिक क्षेत्र में कुल रोजगार में से महिलाओं के रोजगार में बहुत कम केवल 1 प्रतिशत (यानी 1980-81 में 9.7 प्रतिशत से लेकर 1984-85 में 10.8 प्रतिशत तक) वृद्धि हुई है। संगठित क्षेत्र में महिलाओं के उद्योगवार रोजगार के आँकड़े इंगित करते हैं कि 1971 और 1981 दोनों ही अवधि के दौरान, महिला श्रम का बड़ा हिस्सा कृषि से संबद्ध गतिविधियों के बाद सेवाक्षेत्र और विनिर्माण उद्योग में नियोजित था। परन्तु अब परिदृश्य बिल्कुल बदल गया है। 1991 के बाद, सेवा क्षेत्र और अन्य व्यवसायों जैसे, आईटी और अध्यापन में महिलाओं की संख्या में उल्लेखनीय वृद्धि देखी गई है।

विनिर्माण

महिलाओं के लिए रोजगार के प्रमुख स्रोतों में से एक क्षेत्र विनिर्माणका था। एक अंतर्दृष्टि के लिए देखा जा सकता है कि 1971-81 के दौरान, इस क्षेत्र में कार्यरत महिलाओं के अनुपात में ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में वृद्धि दर्ज हुई। ग्रामीण क्षेत्रों में महिला कामगारों के अनुपात में 1971 के 270 प्रति 1000 पुरुष से बढ़कर 1980 में .... प्रति 1000 पुरुष हो गया जबकि इसी दौरान 'शहरी क्षेत्र में 260 प्रति 1000 पुरुष से बढ़कर 330 प्रति 1000 पुरुष हो गया। हालाँकि इस क्षेत्र के अन्तर्गत परम्परागत उद्योगों जैसे कि भोजन, तम्बाकू और वस्त्रोद्योग में महिलाओं का प्रतिशत हिस्सा लगभग स्थिर रहा और 86 प्रतिशत से अधिक महिला कामगार विनिर्माण उद्योग में नियोजित थीं। काजू और कॉफी उद्योग में मशीनीकरण के चलते और उसके परिणामस्वरूप घरेलू उद्यम से दूसरी तरह के संगठनों में बदलाव से महिलाओं के रोजगार को काफी क्षति पहुंची। उद्योगों के गैर-परंपरागत समूहों जैसे वस्त्र, प्लास्टिक और रबर उत्पादों में महिला रोजगार के हिस्से में एक उल्लेखनीय वृद्धि दर्ज की गई।

अन्य उद्योगों जैसे उर्वरक और कीटनाशक, पेंट निर्माण, रसायनिक उत्पाद, छपाई, रंगाई और सूती वस्त्रों के विरंजन, मशीनरी के विनिर्माण, बिजली के उपकरण आदि में महिला रोजगार के संदर्भ में विकास हुआ है। गैर-परंपरागत उद्योग की ओर भी कुछ बदलाव हुए हैं। हालाँकि आधुनिक क्षेत्र में महिलाओं का प्रवेश कम कुशलता वाली नौकरियों तक सीमित था। उदाहरण के लिए, रबर, प्लास्टिक और पेट्रोलियम जैसे उद्योगों में महिलाओं का लाभ ग्रामीण क्षेत्रों में अधिक रहा है जो कम आधुनिक तकनीकों का उपयोग और कम मूल्यवान उत्पादों का उत्पादन करते हैं।

व्यापार एवं वाणिज्य

व्यापार और वाणिज्य में महिला कामगारों की हिस्सेदारी ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में बढ़ी है। हालाँकि इस क्षेत्र में महिला कामगारों की संख्या अभी भी बहुत नगण्य है जैसे कि कुल कामगारों का मात्र 1 प्रतिशत हिस्सा। पिछले 20 वर्षों के दौरान महिला उद्यमिता पर तमाम चर्चाएँ हुई हैं।

सेवाओं और अन्य व्यवसायों में महिलाएँ

सार्वजनिक क्षेत्रों में पेशेवर, तकनीकी और संबंधित श्रेणियों जिसमें शिक्षिकाएँ भी शामिल हैं, में महिला कर्मचारियों की संख्या में 1960 से लगातार वृद्धि हो रही है। इसी तरह परिवहन, भंडारण और संचार में भी महिला कर्मचारियों की संख्या लगातार बढ़ी है। निजी क्षेत्र में, वह क्षेत्र जहाँ महिला कामगारों के अनुपात में तेज़ी से वृद्धि हुई है, वे हैं लिपिक और संबंधित क्षेत्र, प्राथमिक और माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षक। प्रबंधक स्तर पर महिलाओं का नियोजन मात्र कुछ नए उद्योगों जैसे कि विज्ञापन, बाजार अनुसंधान, संक्रिया अनुसंधान, होटल प्रबंधन, आईटी और कॉटेज उद्योगों में हुआ है।

औद्योगीकरण और बढ़ती हुई नौकरशाही के परिणामस्वरूप बड़े पैमाने पर सफ़ेदपोश नौकरियों का आगाज़ हुआ है जिसमें कुछ विशेष प्रकार की गतिविधियों में महिला कर्मचारियों का संकेन्द्रण हुआ। अध्यापन में महिलाओं का संकेन्द्रण, अवसर और प्राथमिकता दोनों तथ्यों को दर्शाता है। भारतीय समाज में अध्यापन कार्य को महिलाओं के लिए सर्वाधिक उत्तम काम माना गया है क्योंकि इसमें नारीत्व की पारंपरिक भूमिका के साथ सबसे कम टकराव होता है। हालाँकि, संगठित क्षेत्र में महिला कर्मचारियों के संघटन को देखते हुए ऐसा प्रतीत होता है कि इनमें से तीन चौथाई के करीब महिलाएँ ऐसी नौकरियों में हैं जिसमें माध्यमिक और उच्चतर शिक्षा की आवश्यकता पड़ती है। स्पष्ट रूप से महिलाओं के लिए माध्यमिक और उच्चतर शिक्षा ग्रहण कर पाना शुद्धतः शहरी परिघटना है जो इस निष्कर्ष की ओर इंगित करता है कि ग्रामीण महिलाएँ व्यापक पैमाने पर सार्वजनिक क्षेत्र की नौकरियों से बाहर हैं क्योंकि वे प्रधानतः शैक्षिक रूप से वंचित श्रेणी से संबंध रखती हैं। पंजीकृत व्यापार संघों में, जो नियमित रूप से अपना प्रभाव दिखलाते हैं, महिला सदस्यों की प्रतिशतता बहुत ही मामूली लगभग नगण्य है और उससे भी कम प्रतिनिधित्व उच्च पदस्थ नौकरशाही और अधिशासी सदस्यों में है।

अध्यापन में महिलाएँ

20वीं सदी की शुरुआत में स्थापित लड़कियों के स्कूल, प्रशिक्षण स्कूल, कॉलेज और विश्वविद्यालयों ने महिलाओं को सक्षम बनाया कि वे अध्यापन व्यवसाय के लिए आवश्यक योग्याताओं को हासिल कर सकें। स्वतंत्रता के पश्चात वाले युग में भारत में महिला अध्यापिकाओं की संख्या में खूब वृद्धि हुई। यद्यपि महिलाओं ने बड़ी तेज़ी से इन व्यवसायों में प्रवेश किया परन्तु शीर्षस्थ पद तक पहुंचना उनके लिए हमेशा कठिन था। पिछले 20 वर्षों के दौरान परिदृश्य बदल चुका है। सार्वजनिक के साथ-साथ निजी क्षेत्र के शैक्षिक संस्थानों में विभिन्न पदों का नारीकरण कर दिया गया है। आजकल, स्कूलों और विश्वविद्यालय शिक्षा में महिला प्रबंधक काफी बड़ी संख्या में पायी जाती हैं।

इंजीनियरिंग में महिलाएँ

घर से बाहर संपादित किए जाने वाले कठिन श्रम की प्रकृति के चलते इंजीनियरिंग को आमतौर पर पुरुषों का व्यवसाय माना जाता था। 1990 के दशक से इस क्षेत्र ने भी व्यापक बदलाव का अनुभव किया है। अब महिलाएँ बड़ी अच्छी तादात में आईटी और बायो-टेक्नोलॉजी क्षेत्रों में प्रवेश कर रही हैं।

प्रशासनिक और केंद्रीय सेवाओं में महिलाएँ

आजादी से पहले सिविल सेवा परीक्षा लेने वाली संस्थाओं का महिलाओं से एक तरह का बैर या शत्रुता या विद्वेश हुआ करता था। केवल अविवाहित महिलाएँ या बिन बच्चे की विधवाएं इन सेवाओं में शामिल हो सकती थीं, और सरकार ने महिलाओं को चयनित नहीं करने का अधिकार आरक्षित कर रखा था भले ही वे परीक्षा प्रक्रिया का उत्तीर्ण करके योग्य घोषित हुई हों। 1954 में, सरकार ने एक प्रावधान के तहत महिलाओं पर प्रतिबंधों में ढील दी कि अगर विवाहित महिलाओं द्वारा सेवाओं की दक्षता में बाधा आई तो इन महिलाओं को इस्तीफा देने के लिए कहा जा सकता था। फिर भी इस नियम का उपयोग शायद ही कभी किया गया। अंततः यह वर्ष 1972 था जब महिला सांसदों द्वारा संसद में धमकी भरी निंदा किए जाने के बाद इसे हटा दिया गया। आईएएस कैडर में पहली महिला अधिकारी ने 1951 में ज्वाइन किया था और उन्होंने यह बताया कि चयन समिति ने उसे विदेश सेवा में शामिल होने के लिए मनाने की काफी कोशिश की थी क्योंकि उन्हें संदेह था कि क्या कोई महिला जिले में आईएएस अधिकारी के रूप में कानून और व्यवस्था की जिम्मेदारियों का पालन कर पाएगी?

इसी तरह भारतीय पुलिस सेवा भी कई वर्षों तक महिलाओं को स्वीकार करने से इनकार करता रहा। उनका तर्क यह था कि पुलिस सेवा और महिलाएँ परस्पर विरोधी या असंगत थीं। हालाँकि पहली महिला आईपीएस अधिकारी (किरण बेदी) ने 1972 में कार्यभार ग्रहण किया। वर्ष 1971 की जनगणना के अनुसार, पूरे भारत में प्रशासनिक और कार्यकारी पदों पर 1000 महिलाएँ, जबकि वित्तीय संस्थानों में प्रबंधकों और अधिकारियों के रूप में लगभग 400 महिलाएँ कार्य कर चुकी थीं। इसकी तुलना में वर्तमान परिदृष्य काफी उत्साहजनक है। पिछले 40 वर्षों में आई.ए.एस.,आई.पी.एस.,आई.ई.एस.,आई.एफ.एस. जैसी सेवाओं में बड़ी संख्या में महिलाएँ शामिल हो रही हैं।

क्लर्क, आशुलिपिक, टाइपिस्ट, रिसेप्शनिस्ट जैसी नौकरियां अधिक से अधिक शिक्षित महिलाओं को नियोजित करती हैं। केंद्र और राज्य सरकार की सेवाओं में, महिला कर्मचारियों का सबसे अधिक संकेंद्रण तृतीय श्रेणी यानी लिपिकीय लेखा और संबंधित कर्मचारियों के स्तर पर था।

कानूनी सेवाओं में महिलाएँ

19वीं सदी के दौरान, ब्रिटिश कानून ने इग्लैंड और भारत में महिलाओं के बार में प्रवेश करने पर रोक लगाई हुई थी। हालाँकि, तत्कालीन बॉम्बे की एक पारसी ईसाई महिला कार्नेलिया सोराबजी 1892 में विधि स्नातक करने के लिए ऑक्सफोर्ड गई और कानून की डिग्री हासिल करने वाली पहली भारतीय महिला बनी। वहां से वापस लौटने पर बंगाल के गवर्नर ने उन्हें महिलाओं के प्रतिपाल्य अधिकरण में कानूनी सलाहकार के रूप में नियुक्त किया।

विरोध और आंदोलनों के कारण, भारत सरकार ने 1923 में विधि व्यवसायी (महिला) अधिनियम पारित किया जिसके द्वारा महिलाओं पर लगे प्रतिबंध को हटा दिया गया। इसके बाद से महिला अधिवक्ताओं की संख्या लगातार बढ़ी और परिणामस्वरुप न्यायपालिका में महिलाओं का प्रतिनिधित्व भी अधिक हुआ।

स्वास्थ्य सेवाओं में महिलाएँ

मानव सभ्यता की सम्पूर्ण अवधि के दौरान स्वास्थ्य रक्षा और देखभाल के मामलों में महिलाएँ पहले पायदान पर थीं। पहली भारतीय महिला डाक्टर्स जिन्होंने संयुक्त राज्य अमेरिका, इंग्लैंड और स्कॉटलैंड में अध्ययन किए थे, 1880 और 1890 के दशक में यहां के अस्पतालों में काम करने लौटकर वापस भारत आईं। मिशनरियों के रूप में भी योग्य महिला चिकित्सक संयुक्त राज्य अमेरिका से भारत के अस्पतालों में काम करने के लिए आईं। इडा स्कडर, जिन्होंने भारत में उपयुक्त चिकित्सीय देखभाल के अभाव में बच्चे के जन्म के समय महिलाओं की दुर्दशा को साक्षात देखा था, मेडिकल स्कूल में अध्ययन हेतु अमेरिका लौट गई और अध्ययन के पश्चात वेल्लोर में महिलाओं के लिए नर्सिंग और मेडिकल केयर होम खोलने के लिए भारत वापस आईं। इसका नाम बाद में क्रिश्चियन मेडिकल कॉलेज रखा गया।

1885 में लेडी डफ़रिन कोश बनाया गया और काफी संख्या में डफ़रिन अस्पताल खोले गए और डफरिन फण्ड की छात्रवृत्तियों से महिला चिकित्सकों को प्रशिक्षण दिया गया। प्रथमतः 1883 में महिलाओं को मेडिकल डिग्री के लिए बॉम्बे विश्वविद्यालय में दाखिल करवाया गया और 1885 में कलकत्ता मेडिकल कॉलेज महिलाओं को मेडिकल डिग्री प्रदान करने में आगे आया। दिल्ली में वर्ष 1916 में लेडी हार्डिंग कॉलेज खुलने के बाद भारत के उत्तरी हिस्से में महिलाओं के लिए पहला मेडिकल कॉलेज खोला गया। इन कॉलेजों से निकले स्नातक डफरिन फण्ड से वित्तीय सहायता प्राप्त अस्पतालों में नौकरी पर रखे गए।

स्वतंत्रता के बाद से मेडिकल कॉलेजों की संख्या बढ़ती गई। 1946 में कुल 1200 छात्रों के वार्षिक नामांकन के साथ सिर्फ पंद्रह मेडिकल कॉलेज थे। आज, स्थिति में इतना सुधार हो चुका है कि भारत के प्रत्येक राज्य में सैकड़ों मेडिकल कॉलेज हैं।

विज्ञान में महिलाएँ

19वीं सदी से पहले वैज्ञानिक समुदाय में अनन्य रूप से पुरुषों का वर्चस्व था। विज्ञान को केवल पुरुषों के लिए उपयुक्त क्षेत्र माना जाता था। वैज्ञानिक कार्य की कठोरता के चलते महिलाओं को उसके लिए भावनात्मक और बौद्धिक रूप से अनुपयुक्त माना जाता था। हालाँकि पिछले कुछ वर्षों में वैज्ञानिक क्षेत्र में प्रवेश करने वाली महिलाओं की संख्या में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है, मगर अभी भी विज्ञान की विभिन्न शाखाओं में महिलाएँ संख्या और अनुपात में पुरुषों से काफी पीछे हैं।

20वीं सदी का पहला दशक सकारात्मक बदलावों का साक्षी बना। लेकिन फिर भी जो महिलाएँ वैज्ञानिक पेशे में सफल हुईं उनमें असाधारण प्रेरणा, मान-अपमान से परे रह लेने की क्षमता और अद्भुत योग्यता और साहस होना चाहिए था। महिलाओं के लिए यह आवश्यक हो जाता था कि पुरुष वर्चस्व वाले क्षेत्र में काम चुनने के चलते पड़ने वाले तिहरे दण्ड से पार पाना होता था। इस तिहरे जुर्माने को इस तरह से वर्णित किया गया थाः क) विज्ञान को सांस्कृतिक तौर पर महिलाओं के लिए अनुपयुक्त कॅरियर के रूप में परिभाषित किया गया था; ख) एक धारणा यह भी थी कि पुरुषों की तुलना में महिलाएँ विज्ञान में कम सक्षम थीं; ग) वैज्ञानिक समुदाय के भीतर महिलाओं को अत्यधिक भेदभाव का सामना करना पड़ता था।

जबकि विज्ञान के अन्तर्गत चिकित्सा एक पसंदीदा और अधिक सम्मानित क्षेत्र था, कुछ अन्य क्षेत्र जिन्होंने महिलाओं को आकर्षित किया वे थे रसायन, जैव-भौतिकी, सांख्यिकी, वनस्पति विज्ञान, माइक्रो बॉयलॉजी और अन्य सामान्य जीव विज्ञान से संबंधित विज्ञान की शाखाएं।

मीडिया में महिलाएँ

आजादी के समय से ही महिलाओं के लिए एक कॅरियर के रूप में पत्रकारिता का क्षेत्र खुलने लगा था। मीडिया में भी बहुत कम महिलाएँ ऐसी थीं जिन्हें पत्रकार के तौर पर वर्गीकृत किया जा सकता था और अधिकांशतया केवल अधीनस्थ पदों पर कार्यरत थीं।

कुछ सबसे प्रतिष्ठित महिला पत्रकार थीं, जो उस समय महिलाओं और नवजवानों की पत्रिकाओं की संपादक थीं। उनमें ईव्स वीकली की गुलशन इविंग, फेमिना की विमला पाटिल और मनोरमा की राचेल थॉमस, यूथ टाइम्स की एन्स जंग और वनिता की श्रीमती के. एम. मैथ्यू थीं।

तथ्यगत तौर पर पहला समाचार पत्र सिंडीकेट श्रीमती कुसुम नायर और उनके पति द्वारा शुरू किया गया था। 1979 में महिलाओं के एक समूह द्वारा एक नारीवादी पत्रिका 'मानुशी' का प्रकाशन हिन्दी और अंग्रेजी में किया गया। अब हम इस बात के साक्षी हैं कि प्रिण्ट और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया में महिलाएँ जिम्मेदार और चुनौतीपूर्ण पदों पर विराजमान हैं।

भारत में ऐसी बहुत सी महिलाएँ थीं जो साहित्य की दुनिया में प्रतिष्ठित थीं और रेडियो, टेलीविजन तथा फिल्म उद्योग में भी महिलाओं द्वारा उल्लेखनीय योगदान दर्ज किया गया। मल्टीमीडिया चैनलों ने एंकर, संवाददाताओं और रिपोर्टरों के रूप में कॅरियर के लिए बड़े केन्द्र खोल दिए हैं लेकिन लगभग सभी मीडिया मालिक पुरुष हैं।

अपनी प्रगति की जांच कीजिए

एक या दो पंक्तियों में निम्न व्यवसायों में काम करने वाली महिलाओं के बारे में लिखें:

1) चिकित्सा

2) विज्ञान

3) अध्यापन

4) कानून

5) मीडिया

6) व्यापार और वाणिज्य

आइए, अब हम विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में महिलाओं के घटक के बारे में पढ़ते हैं।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

2.7 पंचवर्षीय योजनाएं (एफवाईपी) : महिला कामगार

यहां हम विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में महिलाओं के लिए आवंटित बजट पर चर्चा करेंगे।

पांचवीं पंचवर्षीय योजना तक महिलाओं को कल्याण के विषयों में से एक समझा जाता था और उन्हें वंचित समूहों के साथ एक कोटि में रखा गया।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना (1956-1961) को गहन कृषि विकास के समग्र उपागम से जोड़ा गया था। इस योजना में पहली बार श्रमिकों के रूप में महिलाओं को संगठित करने की आवश्यकता की पहचान की थी। इसने महिलाओं द्वारा झेली जाने वाली सामाजिक पूर्वाग्रहों और उन पर थोपी हुई अयोग्यताओं को भी समझा। योजना में कहा गया था कि महिलाओं को खतरनाक कामों से बचाया जाना चाहिए, उनके लिए मातृत्व लाभ और उनके बच्चों के लिए क्रेच सुविधा दी जानी चाहिए। इसमें यह भी सुझाव दिया गया था कि समान काम के लिए समान वेतन के सिद्धांत और महिलाओं के लिए प्रशिक्षण के प्रावधान का तेजी से कार्यान्वयन किया जाए जिससे महिलाएँ उच्चतर कामों के लिए प्रतिस्पर्धा कर सकें।

तृतीय पंचवर्षीय योजना (1961-1966) ने महिलाओं की शिक्षा को उनके कल्याण हेतु प्रमुख रणनीति के तौर पर मान्यता दी। स्वास्थ्य कार्यक्रम मुख्य रूप से मातृत्व एवं बाल कल्याण, स्वास्थ्य शिक्षा, पोषण और परिवार नियोजन के प्रावधानों पर केन्द्रित था।

चौथी पंचवर्षीय योजना (1969-1974) ने महिला शिक्षा को बढ़ावा देने की रणनीति का जारी रखा। प्रचालन के लिए आधार के रूप में मूलभूत नीति यह थी कि महिलाओं का कल्याण परिवार के अंदर ही प्रोत्साहित किया जाए।

पांचवीं पंचवर्षीय योजना (1974-1979) ने महिलाओं को, उनकी आय की जरूरतों और उनके संरक्षण के लिए प्रशिक्षित करने की आवश्यकता पर जोर दिया। इसलिए इस योजना को पहली बार महिलाओं की आर्थिक भूमिका को महत्व देने के लिए याद किया जाता है। इस योजना की अवधि, अंतर्राष्ट्रीय महिला दशक और भारत में महिलाओं की स्थिति पर बनी समिति द्वारा रिपोर्ट जमा करने के साथ-साथ पड़ी। रिपोर्ट में जोर देकर कहा गया था कि सामाजिक परिवर्तन और विकास की गत्यात्मकता ने बड़ी संख्या में महिलाओं को प्रभावित किया और असंतुलन और असमानताओं की एक श्रृंखला को वास्तविक धरातल पर उतार दिया जैसे कि क) घटता लिंग अनुपात, ख) निम्न आयु संभाव्यता, ग) उच्चतर शिशु और मातृ मृत्यु दर, घ) काम में घटती सहभागिता, ड) निरक्षरता और च) बढ़ता प्रवासन।

भारत की योजना के इतिहास में पहली बार, **छठी पंचवर्षीय योजना** (1980-85) ने महिला और विकास पर एक अलग अध्याय की शुरुआत की। सरकार ने छठीं योजना अवधि के दौरान कार्यान्वयन के लिए महिलाओं के रोजगार पर एक कार्यदल की नियुक्ति की। इस योजना के दस्तावेज में दर्ज किया गया था कि महिलाओं की स्थिति में सबसे महत्वपूर्ण सुधारों में से एक यह होगा कि रोजगार अवसरों में से उपयुक्त हिस्सा उनके लिए सुरक्षित कर दिया जाए, और इसे दर्शाने के लिए बजट आवंटन की निश्चित प्रतिशतता महिलाओं के लिए हो तथा पूरे भारत में चलने वाली गरीबी उन्मूलन के कार्यक्रमों के बजट आवंटन में से 30 प्रतिशत आवंटन महिलाओं के लिए निर्धारित कर दिया गया। विकास को महिलाओं की शिक्षा, रोजगार और स्वास्थ्य में उन्नति के तौर पर भी परिभाषित किया गया।

सातवीं पंचवर्षीय योजना (1985-1990) के संचालन ने अंतर्राष्ट्रीय महिला दशक के दौरान व्यक्त महिलाओं के लिए समानता और सशक्तीकरण की चिंताओं का विश्लेषण किया। इसने महिलाओं में आत्मविश्वास बढ़ाने, उनकी अधिकारों और विशेषाधिकारों के बारे में

उनमें जागरूकता पैदा करने और उन्हें आर्थिक गतिविधियों तथा रोजगार के लिए प्रशिक्षित करने पर ध्यान केंद्रित करने की गुणात्मकता पर ज़ोर दिया। इस योजना अवधि में कुल परिव्यय का 2.4 प्रतिशत महिलाओं के विकास के लिए समर्पित किया गया था। योजना अवधि के दौरान, लैंगिक पूर्वाग्रह और जेंडर पक्षपात को समाप्त करने के लिए शैक्षणिक कार्यक्रमों की पुनर्संरचना और विद्यालय पाठ्यक्रमों को रूपांतरित करने का सुझाव दिया गया। इससे भी अधिक महत्वपूर्ण यह था कि प्राथमिक स्तर पर लड़कियों के लिए शिक्षा मुफ्त कर दी गई। इसी योजना अवधि में स्वनियोजित महिलाओं के लिए राष्ट्रीय आयोग की स्थापना, भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति को जान पाने की दिशा में बहुत महत्वपूर्ण थी।

आठवीं योजना (1992-1997) ने विकास की बजाय सशक्तीकरण को अपने आदर्शों में स्थान देते हुए पूर्ववर्ती योजनाओं से परिवर्तन दिखलाया और शिक्षा, स्वास्थ और रोजगार जैसे आधारभूत क्षेत्रों में लाभ का प्रवाह महिलाओं की ओर सुनिश्चित करने का वायदा किया। महिलाओं के लिए पंचवर्षीय योजनाओं में व्यय पहली योजना में 4 करोड़ से बढ़कर 8वीं योजना में 2000 करोड़ हो गया था।

नौवीं योजना (1997-2002) ने महिलाओं के सशक्तीकरण को अपना रणनीतिक उद्देश्य घोषित किया। इसने महिलाओं के लिए घटक योजना की अवधारणा को स्वीकार किया और सुनिश्चित किया कि सभी विकास क्षेत्रों से कम से कम 30 प्रतिशत धन आवंटन का प्रवाह महिलाओं के लिए हो। इसने चार गुने ऐसे कार्यक्रमों और योजनाओं का सुझाव दिया जो महिलाओं को सीधे प्रभावित करते थे। इन प्रस्तावित योजनाओं की कोटि को निम्न प्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता है:

1) महिला केंद्रित योजनाएँ जिनमें आवंटित धन का 100 प्रतिशत महिलाओं पर खर्च होना जरूरी था।

2) महिला समर्थित योजनाएं जहां आवंटन और लाभों का कम से कम 30 प्रतिशत प्रवाह महिलाओं के लिए था।

3) जेंडर-तटस्थ योजनाएं पूरे समुदाय के लाभ हेतु थीं जिसमें पुरुष और महिलाएँ दोनों इन योजनाओं का लाभ उठाते हैं.

4) बाकी बचे राज्य आधारित विशिष्ट कार्यक्रम, जिनका महिलाओं की स्थिति/अवस्था पर गहरा प्रभाव पड़ता है। (इकोनॉमिक्स फॉर जेंडर एंड डेवलपमेंट)

दसवीं पंचवर्षीय योजना (2002-2007) देश की महिलाओं के लिए सामाजिक सशक्तिकरण, आर्थिक सशक्तिकरण और लैंगिक न्याय पर केंद्रित थी। **ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना (2007-2012)** के दौरान महिलाओं के संबंध में जेंडर समानता की प्राथमिकता वाले क्षेत्रों जैसे कि संकट में पड़ने वाली महिलाओं के स्वास्थ्य, राहत और पुनर्वास पर केन्द्रित था।

बारहवीं पंचवर्षीय योजना (2012-2017) अपनी योजना अवधि के दौरान महिलाओं के समावेशी विकास पर केन्द्रित थी जिससे कि उनकी स्थिति में समग्र परिवर्तन लाया जा सके जिससे उनके लिए जीवन की गुणवत्ता में सुधार हो। आप इस पाठ्यक्रम के खण्ड 5 के इकाई 4 में प्रत्येक पंचवर्षीय योजना में महिलाओं के घटक के बारे में फिर से पढ़ेंगे।

इकाई के अंत में सवालों को हल करने से पहले इकाई का सारांश पढ़ें।

2.8 सारांश

इस इकाई में आपने अनौपचारिक और औपचारिक दोनों अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में महिलाओं की स्थिति, पद और उनके प्रतिनिधित्व के बारे में पढ़ा। इकाई में असंगठित क्षेत्र की महिला कामगारों की समस्याओं पर भी चर्चा की गई। संगठित क्षेत्र में महिलाएँ अनुभाग के अंतर्गत आपने यह भी पढ़ा कि क्यों भारत में पढ़ी-लिखी महिलाएँ घर से बाहर जाकर भी रोजगार करने का विकल्प चुन रही हैं। इसी अनुभाग में आगे विभिन्न उपजीविकाओं और व्यवसायों में महिलाओं के प्रतिनिधित्व पर विचार किया गया। अंततः संगठित क्षेत्र में काम करने वाली महिलाओं द्वारा सामना की जाने वाली समस्याओं पर चर्चा के साथ यह इकाई समाप्त होती है।

2.9 इकाई के अंत में कुछ प्रश्न

1) संगठित और असंगठित क्षेत्रों में महिलाओं की स्थिति पर विस्तार से वर्णन कीजिए।
2) भारतीय अर्थव्यवस्था में महिलाओं के योगदान की समालोचनात्मक ढंग से जाँच कीजिए।
3) 1951 से 2014 की अवधि के दौरान पंचवर्षीय योजनाओं सरकार द्वारा अपनाए गए कल्याण रणनीतियों की चर्चा कीजिए।
4) भारतीय अर्थव्यवस्था में महिला कामगारों के क्षेत्रवार वितरण का वर्णन करें।

2.10 संदर्भ

Banerjee, Nirmala (1985). Women Workers in the unorganised sector, Hyderabad: Sangam Books.

Devi, Rajula A (1983). Women In the Informal Sector, Kurukshetra:

Government of India, (1974). Towards Equality, Report of the Commission on the Status of Women in India, Ministry of Education and Social Welfare.

Government of India, (1988). Shramashakti, Report of the National Commission on Self-Employed Women and Women in Informal Sector.

Government of India (1988). Report of the Core Group, National Perspective Plan for Women 1988-2000 A.D.

Singh, Anita, Andrea Menece and Kelles (1987). Invisible Hands: Women in Home based Production , New Delhi: Sage Publication.

Patel, Vibhuti (2009). Discourse on Women Empowerment, Delhi: The Women Press.

2.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

GOI (1974). Towards Equality, Report of Ministry of Education and Social Welfare.

Government of India, (1988). Shramashakti, Report of the National Commission on Self-Employed Women and Women in Informal Sector.